॥ श्रीहरिः ॥

दयानन्द का

कच्चा-चिट्ठा



मुरादाबाद निवासी

मुन्शी जगन्नाथदास

रचित



प्रथमवार	सं० १९७७ वि०	मूल्य प्रति
१०००	सन् १९२० ई०	पु०)॥।

Printed and Published by B. D. S.

at the Brahma Press–Etawah.

॥ श्रीहरिः ॥

दयानन्द का कच्चा चिट्ठा

(जगन्नाथदास लिखित)

दयानन्द किस जाति और किस नगर तथा किस पुरुष के पुत्र थे यह बात अब तक किसीको ठीक २ प्रकट नहीं उन्होंने अपना जीवनचरित्र सन् १८६६ और सन् १८८० के थियोसोफिस्ट अंग्रेजी अखबार में आप छपवाया था। उस का उलथा दलपतराय जगरांववाले ने उर्दू में किया है वहां दयानन्द ने अपने बाप का नाम और अपने जन्म स्थान का पता छिपाने में जो कारण लिखा है सर्वथा बुद्धि के विरुद्ध है। परन्तु हम को उस से कुछ प्रयोजन नहीं उस का जो हाल प्रकट है सो लिखते हैं उक्त जीवनचरित्र के पृष्ठ २१ में दयानन्द जी का कथन है कि मुझ को एक ब्रह्मचारी मिला जिसने मुझसे कहा कि तुम हमारे थोक में मिल जाओ। मैं उन के थोक में मिल गया उस ने अपने मत की सब बातें बताकर मेरा नाम शुद्धचेतन रख दिया और मेरे कपड़ों को उसने अपने कपड़ों से बदलवा दिया कि जो आप पहिने हुए

था, पृष्ठ २७ पर लिखा हैकि ब्रह्मानन्द आदि सत्पुरुषोंने मुझ को पूरा२ विश्वास दिला दिया कि ब्रह्म अर्थात् ईश्वर मुझसे भिन्न कोई पदार्थ नहीं है। जीव और ब्रह्म की एकता का निश्चय मुझे सम्यक् करा दिया, पहिले भी प्रायः मेरे मन में यह बात आती थी परन्तु आज इन महात्मा पुरुषों ने इस बात को मेरे मन में पुरे प्रकार से सिद्ध कर के दिखा दिया और मुझे पूरा २ विश्वास होगया कि ब्रह्म मैं ही हूं।

पृष्ठ ३२, ३३ और ३४से प्रकट है कि परमानन्द सरस्वती ने उन को संन्यासियोंकी चौथी कक्षा में मिला लिया और उन को एक दण्ड दिया और उनका नाम दयानन्द सरस्वती रख दिया॥

पाठकगण! ध्यान करें कि वे प्रथम एक ब्रह्मचारीके चेले बने जिसने उनका नाम शुद्ध चेतन रक्खा था फिर ब्रह्मानन्द आदि की संगतिसे उनको पूरा २ यह विश्वास हो गया कि ब्रह्म मैं ही हूं!। तदुपरान्त परमानन्द सरस्वती अद्वैतवादी अर्थात् शङ्करमत के संन्यासी ने उनको अपना चेला बनाया उसी ने उन का नाम दयानन्द सरस्वती रक्खा, चिरकाल पर्य्यन्त यह उसी मतमें रहे और अपने आपको पूर्णब्रह्म समझते रहे। उसी जीवनचरित्र के पृष्ठ ३६ पर लिखा है कि

फिर मैं प्रसिद्ध २ स्थानों और पवित्र तीर्थों की यात्रा और उन के दर्शन के लिये चला। संवत् १९११ को प्रथमवार ही मैं हरिद्वार पर कुंभ के मेले में गया कुम्भ का मेला संवत् १९११ में न था किन्तु संवत् १९१२ में था यहां उनके लेख में एक वर्षकी भूल है, वहांसे ऋषिकेशको चला गया निदान इसी प्रकार पृष्ठ ५३ पर लिखा है कि मैं बदरीनारायण में पहुंचा यहांसे प्रकट है कि इस समय तक वह हरिद्वार आदि और बदरीनारायण के भक्त थे यदि कोई कुछ बनावट बनावें तो उन्होंने आप लिखा है कि फिर मैं पवित्र तीर्थोंकी यात्रा और उनके दर्शनके लिये चला। पृष्ठ ५६ और ५७ पर लिखा कि मुझको एक लाश 'मृतशरीर, दरिया के ऊपर बहती हुई मिली मैंने उस को दरिया से निकाला और तेज चाकू से काटना प्रारम्भ किया—क्या खूब ब्राह्मण और संन्यासी होकर मुरदा लाश को चीरना आप ही का काम था शाबाश ?

(छन्द) तूने किया जो काम उसे शिष्य भी करें।

लिखा है शिष्टाचार को सत्यार्थ में विहित ॥

पृष्ठ ५८ पर चांडालगढ़ के वर्णन में लिखा है कि खोटी प्रारब्ध से इस जगह मुझे भङ्ग पीने का अभ्यास हो गया कभी कभी उस के कारण मैं सर्वथा बेहोश हो जाया करता

था, इति। ऐसे भङ्गड़के लेख और कथन पर विश्वास करना बुद्धिमानों का काम नहीं, कुछ काल तक बाबाजी ने मथुरा में रहकर विरजानन्द अन्धे के पास व्याकरण पढ़ा जीवन पर्यन्त अपनी पुस्तकों में उनको श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य परमविद्वान् श्री विरजानन्द स्वामी लिखा है और अपने लिये उनका चेला स्वीकार किया है वह भी अद्वैतवादी थे फिर वह साधारण संन्यासियों की आकृतिसे हरिद्वार ऋषिकेश आदि के जङ्गलों में रहते रहे कोई उन का नाम भी न जानता था। संवत् १९२४ के उपरान्त वह गङ्गा जी के निकट गांव और नगरों में ठहर कर जो लोग उन से मिलते थे उनसे मूर्त्तिपूजा का निषेध करते थे उस समय तक उन के मनमें उत्तमोत्तम भोजन वस्त्रादि की इच्छा ने प्रवेश नहीं किया था। यहां तक कि सिवाय लंगोटा के उनके शरीर पर और कपड़ा न था अब तक वह अद्वैतवादी थे फिर किसी सत्पुरुष के समझाने से उन्होंने अद्वैतमत को झूठा जानकर छोड़ दिया और द्वैतवादी बने, निदान अद्वैतवाद अर्थात् शङ्कराचार्य के मत के खण्डनमें एक छोटीसी पुस्तक भी बनाई और सत्यार्थप्रकाश में भी उसका खण्डन किया। ध्यान कीजिये कि अब तक उन्होंने कितने रूप बदले और

कितने मत स्वीकार किये किस २ के चेले बने और किस २ का त्याग किया। जिसने जीवन पर्यन्त अपने लिये ब्रह्म माना उस से बढ़कर नास्तिक कौन होगा, ऐसे पुरुषके कथन और वर्त्ताव का क्या भरोसा ? जीवन पर्यन्त जिन विरजानन्दको अपना परमगुरु और परमविद्वान् लिखते रहे उन्हीं के मतको मिथ्या और झूंठा कहते रहे, एक काल में परमविद्वान् और गुरु लिखना और उसी के मत को झूंठा ठहराना अति अयुक्त और बड़ी लज्जा की बात है—

कुछ कालानन्तर उन्होंने सत्यार्थप्रकाश नामक एक पुस्तक बनाई और सन् १८७५ ईस्वी में काशी जी में छपवाई उसके पृष्ठ ४५ में प्रातः सायं मांसादि से होम करना लिखा है। पृष्ठ ६७ में लिखा है कि म्लेच्छ नाम निन्दित नहीं है जिन पुरुषों के उच्चारण में वर्णों का स्पष्ट उच्चारण नहीं होता उनका नाम म्लेच्छ है समाजों के प्रायः सभासद् ऐसे होंगे कि जिन से वर्णों का स्पष्ट उच्चारण कदापि न हो सकेगा। दयानन्द जी के लेखानुसार वे म्लेच्छ ठहरे। अब दयानन्दियों को अधिकार है कि अपने गुरुकी आज्ञा को स्वीकार करें वा उसका तिरस्कार।

पृष्ट १४८ में गाय को गधीकी बराबर समझ कर लिखा है कि गाय तो पशु है सो पशु को क्या पूजा करना उचित

है ? । कभी नहीं किन्तु उसकी तो यही पूजा है कि घास जल इत्यादिक से उसकी रक्षा करना सो भी दुग्धादिक प्रयोजन के वास्ते अन्यथा नहीं । पृष्ठ १४६ में लिखा है कि मांस के पिण्ड देने में तो कुछ पाप नहीं । पृष्ठ१७१ में लिखा है कि यज्ञ के वास्ते जो पशुओं की हिंसा है सो विधि-पूर्वक हनन है । पृष्ठ ३०२ में है कि कोई भी मांस न खाय तो जानवर पक्षी मत्स्य और जल इतने हैं कि उनसे शत सहस्र गुने हो जायं फिर मनुष्यों को मारने लगें और खेतों में धान्य ही न होने पावे फिर सब मनुष्यों की आजीविका नष्ट होने से सब मनुष्य नष्ट हो जांय । पृष्ठ ३०२ में लिखा है कि जहां २ गोमेधादिक लिखे हैं वहां २ पशुओं में नरों का मारना लिखा है और एक बैल से हजारहां गैयां गर्भवती होतीं है इससे हानि भी नहीं होती और जो बन्ध्या गाय होती है उसको भी गोमेध में मारना क्योंकि बन्ध्या से दुग्ध और वत्सादिकों की उत्पत्ति होती नहीं । पृष्ठ ३६६ में लिखा है कि पशुओं को मारने में थोड़ासा दुःख होता है परन्तु यज्ञ में चराचर का अत्यन्त उपकार होता है । ऊपरके लेख से बुद्धिमान् लोग सम्यक् समझ सकते हैं कि दयानन्द जी धर्म के फैलाने वाले थे या अधर्म के, कोई हिन्दू का बेटा

ऐसी अधर्म की बातें कदापि नहीं लिख सकता। छन्द: दयानन्द कहता है जिस को जहां। दया का न था उसमें कुछ भी निशां॥ उसी सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ ४२ और ४३ पर स्पष्ट मुरदों का श्राद्ध लिखा है और पृष्ठ ४७ और ४८ पर मुरदोंके श्राद्ध के लाभ विस्तार पूर्वक लिखे हैं इस के उपरान्त जब कि दयानन्द जी मुरदों के श्राद्ध का खण्डन करने लगे और लोगों ने उन पर आक्षेप किया कि आप ही ने सत्यार्थ प्रकाश में मुरदों का श्राद्ध लिखा है। अब अपने विरुद्ध खण्डन करते हैं ऐसे पुरुषका क्या प्रमाण है?। फिर यजुर्वेदभाष्यके दूसरे अंक पर वह विज्ञापन दिया कि सत्यार्थप्रकाशमें मुरदों का श्राद्ध लिखने और शोधने वालों की भूल से छपगया है। बुद्धिमान् विचार करें कि तीन पृष्ठ का लेख लिखने और शोधने वालों की भूलसे हो सकता है? कदापि नहीं। दयानन्द जी को ऐसा झूठा विज्ञापन छपवाते कुछ लज्जा न आई और यह ध्यान न हुआ कि बुद्धिमान् लोग मुझ को क्या कहेंगे। छन्द। न लज्जा जिसको अनुचित बात से हो। न क्यों दुर्गन्धि उस के मुखसे आवे॥

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के पृष्ठ २१४ में लिखा है कि पुरुष के प्रति वेदकी यह आज्ञा है कि इस विवाहित वा नियो-

जित स्त्री में दश सन्तान पर्यन्त उत्पन्न करे इससे दो पंक्ति के उपरान्त लिखता है कि विवाहित पतिके मरने वा रोगी होनेसे दूसरे पुरुष वा स्त्री के साथ सन्तानों के अभाव में नियोग करे तथा दूसरे के मरण वा रोगी होने के अनन्तर तीसरे के साथ करले इसी प्रकार दशवें तक करनेकी आज्ञा है। यहां विचार का स्थान है कि प्रथम तो वेद की यह आज्ञा प्रकट की कि जिस स्त्री से नियोग करे उसमें दश सन्तान पर्यन्त उत्पन्न करे फिर यह कहा कि सन्तानों के अभाव में नियोग करे जब कि नियोग की आज्ञा सन्तानोंके अभाव में है तो नियोग से दश सन्तान पर्यन्त उत्पन्न करना सर्वथा बुद्धि के विरुद्ध है क्योंकि एक पुत्र वा पुत्रीके उत्पन्न होने पर मनुष्य सन्तान रहित नहीं हो सकता फिर दश सन्तान पर्यन्त उत्पन्न करना कैसे विदित हो सकता है। दूसरी बारके छपे सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ८६ में लिखा है प्रश्न जो किसीके एक ही पुत्र वा पुत्री हो वह दूसरे वर्ण में प्रविष्ट हो जाय तो उसके मां बाप की सेवा कौन करेगा और वंशच्छेदन भी हो जायगा, इसकी क्या व्यवस्था होनी चाहिये ? उत्तर—न किसी की सेवाका भंग और न वंशच्छेदन होगा क्योंकि उनको अपने लड़कें लड़कियों के बदले स्ववर्ण के

योग्य दूसरे सन्तान विद्या सभा और राजसभा की व्यवस्था से मिलेंगे इसलिये कुछ भी अव्यवस्था न होगी यह गुण कर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं की सोलहवें वर्ष और पुरुषों की पच्चीसवें वर्ष की परीक्षा में नियत करनी चाहिये और इसी क्रम से अर्थात् ब्राह्मण वर्ण का ब्राह्मणी क्षत्रिय वर्ण का क्षत्रिया वैश्यवर्ण का वैश्या और शूद्र वर्ण का शूद्रा के साथ विवाह होना चाहिये इति। स्वामीजी की इस आज्ञा से जाति बिरादरी तो सर्वथा समाप्त होगई, न जाने किस २ जातिके लड़के लड़कियों से किस २ जाति के लड़के लड़की बदले जांयगे और किस २ जाति के लड़के लड़कियों का विवाह किस २ जातिके लड़के लड़कियों के साथ होगा? परन्तु यह प्रकट नहीं होता कि यदि विवाह हो जाने के उपरान्त पुरुष वा स्त्री के गुण कर्म अन्य वर्ण के योग्य हो जांय तो उन का बदला करना आवश्यक है वा नहीं। यदि है तो जीवन पर्यन्त बदला बदली ही रहेगी और नहीं तो दयानन्दी वर्ण व्यवस्था की मूल (जड़) सर्वदा हिलती रहेगी।

पृष्ठ ११८ में लिखा है कि—जब पति सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ होवे तब अपनी स्त्री को आज्ञा देवे कि हे सुभगे! सौभाग्य की इच्छा करने हारी स्त्री तू मुझ से दूसरे पतिको

इच्छा कर, क्योंकि अब मुझसे सन्तानोत्पत्तिकी आशा मत करे। वैसे ही स्त्री भी जब रोगादि दोष से ग्रस्त होकर सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ होवे तब अपने पति को आज्ञा देवे कि-हे स्वामिन्! आप सन्तानोत्पत्ति की इच्छा को मुझ से छोड़ के किसी दूसरी विधवा स्त्री से नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कीजिये। फिर पृष्ठ ११६ में लिखा है कि-विवाहिता स्त्री जो विवाहित पति धर्मके लिये परदेश गया हो तो आठ वर्ष, विद्या और कीर्त्तिके लिये गया हो तो छः और धनादि कामना के लिये गया हो तो तीन वर्ष बाट देख के पश्चात् नियोग करके सन्तानोत्पत्ति करले जब विवाहित पति आवे तब नियुक्त पति छूट जावे। जो पुरुष अत्यन्त दुःखदायक हो तो स्त्री को उचित है कि उस को छोड़के दूसरे पुरुष से नियोग कर सन्तानोत्पत्ति करके उसी विवाहित पति के दायभागी सन्तान उत्पन्न करले, पृष्ठ १२० में लिखा है कि-गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न करने के समय में पुरुष वा स्त्री से न रहा जाय तो किसी से नियोग करके उस के लिये पुत्रोत्पत्ति करदे। इति।

जिन दयानन्द की विद्या और बुद्धि पर दयानन्दियों को घमण्ड है यह उन की शिक्षा और उपदेश का संक्षेप है मैं

विश्वास करता हूं कि ऐसी बातों को श्रेष्ठ लोग तो क्या कोई नीच भी स्वीकार न करेगा। दयानन्दियों को अधिकार है कि वे धर्म जानें वा अधर्म मानें, शास्त्र का आशय ऐसा कदापि नहीं केवल दयानन्द की अज्ञता और हठ धर्मी का फल है। गर्भवती से नियोग करके उस के दूसरा गर्भधारण करना यह अद्भुत बात है छन्द-यही पाठशाला है और येही पाठक। तो शिष्यों की बुद्धि न क्यों नष्ट होगी॥

इसी सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ ६७ में है कि उत्तम स्त्री सब देश तथा सब मनुष्यों से ग्रहण करै इस आज्ञासे यदि उत्तम स्त्री मुसलमान वा ईसाई तथा भंगी चमार तक की हो वहां से लेलेवें? वाह क्या उत्तम शिक्षा है अवश्य ऐसी बुद्धि पर रोना उचित है-पृष्ठ २५८ में लिखा है कि उष्णदेश हो तो सब बाल शिखा सहित छेदन करा देना चाहिये क्योंकि शिर में बाल रखनेसे उष्णता अधिक होती है और उससे बुद्धि कम हो जाती है॥ इति॥

दयानन्दकी बुद्धि पर ध्यान करना चाहिये कि हिन्दूपन का चिन्ह तक मिटाना चाहता है दयानन्दियों को उचित है कि अपने गुरु की आज्ञानुसार स्त्रियों के शिर के बाल भी मुंडवावें नहीं तो उन के शिरमें बाल रहनेसे उष्णता अधिक होगी और उसीसे बुद्धि कम होजायगी। पृष्ठ २६३ में लिखा

है। प्रश्न–द्विज अपने हाथ से रसोई बनाके खावें वा शूद्र के हाथ की बनाई खावें। १ उत्तर शूद्र के हाथ की बनाई खावें इति। बस देख लीजिये कि इन लोगों के ये धर्म कर्म और ये उपदेश हैं।

पृ० २६६ में लिखा है। प्रश्न–जो सभी अहिंसक होजांय तो व्याघ्रादि पशु इतने बढ़जांय कि सब गाय आदि पशुओं को मारखांय। उत्तर–यह राजपुरुषों का काम है कि जो हानिकारक पशु वा मनुष्य हों उनको दण्ड देवें और प्राण से भी वियुक्त करदें। प्रश्न–फिर क्या उनका मांस फेकदें? उत्तर–चाहे फेंकदें चाहें कुत्ते आदि मांसाहारियों को खिला देवें वा जला देवें अथवा कोई मांसाहारी (मनुष्य) खावे तो भी संसार की कुछ हानि नहीं होती किन्तु उस मनुष्य का स्वभाव मांसाहारी होकर हिंसक हो सकता है इति। यहां दयानन्दजी को यह भी ज्ञान न हुआ कि कहीं सिंहादि पशुओं और मनुष्य का मांस कोई मनुष्य खाता है या नहीं वाहरी बुद्धि। पृष्ठ ५८८ में लिखा है कि विद्वानों को देव और अविद्वानों को असुर, पापियों को राक्षस अनाचारियों को पिशाच मानता हूं इति। यद्यपि दयानन्दी पुरुष अपने आचार्य दयानन्द को विद्वान् समझें और देव मानें पक्षपात

रहित न्याय दृष्टि से विचार किया जाय तो वह सर्वथा अविद्वान् थे क्योंकि उन्हों ने अपने पुस्तकों में सर्वथा वेद विरुद्ध और अशुद्ध लेख लिखे हैं अतएव वह अपने लेखानुसार असुर ठहरेंगे इसके सिवाय समाजोंमें अनेकों सभासद्द जो अविद्वान् पाप कर्म करने वाले और अनाचारी होंगे वह दयानन्दजीके लेखानुसार असुर राक्षस और पिशाच हुए प्रत्येक को आर्य कहना सर्वथा अशुद्ध और दयानन्द जी के मन्तव्य से विरुद्ध है। आर्योद्देश्यरत्नमाला में लिखा है कि जो श्रेष्ठ स्वभाव धर्मात्मा परोपकारी और सत्यविद्यादि गुण युक्त हैं उनको आर्य्य कहते हैं। अब ध्यान दीजिये कि समाजों में ऐसे लोग सौ में पांच भी कठिनता से होंगे, फिर आर्य्य समाज कैसा ?

संवत् १९६३ की छपी हुई संस्कार विधिके पृष्ठ ११ पर लिखा है कि जो चाहे मेरा पुत्र पण्डित, सदसद्विवेकी, शत्रुओं को जीतने वाला, स्वयं जीतने में न आने वाला युद्ध में गमन हर्ष और निर्भयता करने वाला शिक्षित वाणी का बोलने वाला, सब वेद वेदांग विद्या का पढ़ने और पढ़ाने तथा सर्वायु का भोगने वाला पुत्र होय वह मांसयुक्त भात को पकाके पूर्वोक्त घृतयुक्त खाय तो वैसे पुत्र होने का सम्भव है ॥ इति ॥

यह तो दयानन्दियोंका विचित्र प्रयोग है दयानन्दियों को अवश्य परीक्षा करनी चाहिये । पृष्ठ ४२ में लिखा है कि:— अजाके मांस का भोजन अन्नादि की इच्छा करने वाला तथा विद्या कामना के लिये तित्तिर का मांस भोजन करावें । पृ० १४१ मृतक के शरीर प्रमाण बराबर घी और कपूर चन्दनादि सुगन्ध साथ लेले न्यूनसे न्यून वीससेर घी अवश्य होना चाहिये इतना भी घृतादि न होय तो न गाड़े न जल में छोड़े न दाह करे किन्तु दूर जाके जङ्गल में छोड़ आवे,, इति दयानन्द जी के चेलों के दश वीस मुरदे जङ्गल में पड़ेंगे तो गुर्वाज्ञा का लाभ प्रकट होगा । पृ० १५० मृतक के भस्म और अस्थि को भूमिमें गाढ़ देवे अथवा बाग वा खेत में डाल देवें इति । बाग और खेत में मुरदों की भस्म और अस्थि को डालकर केवल अपने वृक्षों की मट्टी ही खराब करना नहीं किन्तु अमेध्य खाद डालकर वहां के उत्पन्न होने वाले अन्न फलादि को अशुद्ध करके उनके खाने वालों को हानि पहुंचाना भी है । दयानन्द कृत यजुर्वेदभाष्य अध्याय १ मन्त्र ५ का भावार्थ जो झूठ का आचरण करने वाले हैं वे असुर राक्षस आदि नामों के अधिकारी होते हैं, इति ॥

दयानन्द और कोई दयानन्दी झूठ बोलने से सर्वथा रहित नहीं हो सकता, दयानन्द जी के लेखानुसार वे किन

नामों के अधिकारी हुए ? अध्याय १३ मन्त्र ४८ का भावार्थ जो हानिकारक पशु हों उनको मारे, इति। यह स्पष्ट हिंसा धर्म की आज्ञा है दयानन्द जी की इस आज्ञा के अनुसार दयानन्दानुयायी न जाने किस २ प्राणी की हिंसा करेंगे ?। मन्त्र ४९ का भावार्थ जो जंगलमें रहने वाले नीलगाय आदि प्रजा की हानि करैं वे मारने योग्य हैं। पहिले सत्यार्थप्रकाश में गाय बैल आदि का मारना, मांसादि से होम करना मांस के पिण्ड देना और मांसभक्षण की पुष्टि लिखी, वेदभाष्यमें गायका नहीं तो नीलगाय आदिका मारना लिख दिया हा!!!

छन्द—दयानन्द में था दया का न नाम।
दयालू से होता नहीं ऐसा काम॥

अध्याय १४ मन्त्र ९ का पदार्थ-पीठ से बोझ उठानेवाले ऊंट आदि के सदृश वैश्य इति। देखो दयानन्द जी ने यहां, वैश्यों की कैसी निन्दा की है, कि उनको ऊंट आदिके सदृश लिखा, शोक है उन वैश्यों की बुद्धि पर कि जो फिर भी उन के अनुयायी बनते हैं। अध्याय १६ मं० ५२ का पदार्थ। हे असुर के समान सोने वाले राजन्, इति। देखिये राजा के लिये कैसी अनुचित उपमा दी है, कोई बुद्धिमान् ऐसी उपमा कदापि नहीं देगा अध्याय १७ मन्त्र ४४ का भावार्थ

सभापति आदि को योग्य है कि जैसे शूरवीर पुरुषोंकीसेना स्वीकार करें वैसे शूरवीर स्त्रियों की भी सेना स्वीकारकरें, इति। जो कोई दयानन्द के इस लेख को वेदकी आज्ञा जाने वह अपनी स्त्रियों को सेना में प्रविष्ट करावे। अध्याय १९ मन्त्र २० का भावार्थ-जो इस संसार में बहुत पशु वाला होम करके हुतशेष का भोक्ता वेदवित् और सत्यक्रिया का कर्त्ता मनुष्य होवे सो प्रशंसा को प्राप्त होता है, इति। सन् १८८४ के छपे हुए सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ २८४ में लिखा है कि-घोड़े गाय आदि पशु मारके होम करना कहीं नहीं लिखा केवल वाममार्गियों के ग्रन्थों में ऐसा अनर्थ लिखा है इति। इस कथन से सिद्ध है कि-दयानन्द जी का वेद भाष्य वाममार्गियों का ग्रन्थ है निस्सन्देह दयानन्दजी के अन्तःकरण में वाममार्गियों ही का मत भरा हुआ था जिसको उन्हों ने पहिले सत्यार्थप्रकाश में सम्यक् प्रकट किया है। अध्याय२४ मन्त्र २। ३ के पदार्थमें -मुर्गा, उल्लू पक्षियों नीलकण्ठआदि पक्षियों की प्राप्ति और भावार्थ में उनके बढ़ाने को अच्छा लिखा है दयानन्दियों को अपने गुरु की आज्ञा का पालन करना चाहिये। अध्याय २७ मन्त्र ३४ का पदार्थ-हे जमाई के तुल्य विद्वान्, इति। क्या दयानन्द जी के चेले अपने गुरुकी इस आज्ञा का अनुसरण करते हैं ?।

अध्याय २८ मन्त्र ३२ का भावार्थ–हे मनुष्यो ! जैसे बैल गौओं को गाभिन करके पशुओंको बढ़ाता है वैसे ही गृहस्थ लोग स्त्रियों को गर्भवती कर प्रजाको बढ़ावें इति । दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश मुद्रित सन् १८७५ के पृष्ठ ३०३ में लिखा है कि एक बैलसे हजारहां गैयां गर्भवती होती हैं । यहां वही अभिप्राय है वा और कुछ ? अध्याय २६ मन्त्र ४० का भावार्थ–माताके तुल्य सुख देनेवाली पत्नी और विजय सुख को प्राप्त हों इति । क्या खूब ? कहीं जोरू भी माताके सदृश सुख देने वाली होती है ? । अध्याय ३० मन्त्र १६ का पदार्थ हे जगदीश्वर ! मच्छियोंसे जीवने वालेको–उत्पन्न कीजिये अध्याय ३० मन्त्र २१ का पदार्थ–हे परमेश्वर ! सांप आदिको उत्पन्न कीजिये इति । कहिये यह प्रार्थना जगत् के लिये लाभकारी है वा हानिकारक, यदि दयानन्दियों के घरों में दो २ सांप उत्पन्न हों जावें तो गुरु के लेखका फल प्रकट हो जाय । यहां तक दयानन्द के पुस्तकों से संक्षिप्त दिग्दर्शन मात्र थोड़ा सा लिखा गया ॥

इति ।